1

बहादुर

आपने कम उम्र के अनेक लड़के-लड़कियों को कारखानों, चाय की दुकानों या फिर घरों में काम करते देखा होगा। आपकी इच्छा होती होगी कि उनके विषय में कुछ जानें, जैसे– वे कहाँ से आए हैं? क्यों आए हैं? कैसे रहते हैं? उनके साथ कैसा व्यवहार किया जाता है? विभिन्न परिस्थितियों का सामना वे कैसे करते हैं ? संभव है कि इस विषय में आपके भी कुछ अनुभव हों।

चित्र 1.1

बहादुर एक ऐसे किशोर की कहानी है, जो अपने घर से भागकर शहर आता है। वहाँ एक घर में नौकरी करने लगता है। वह अपना काम पूरी ईमानदारी और लगन से करता है, लेकिन एक दिन अचानक वह इस घर से भी भाग जाता है। वह ऐसा क्यों करता है – आइए, जानें।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप

- बहादुर के घर से भागने के मनोवैज्ञानिक कारण स्पष्ट कर सकेंगे;
- वयस्कों, विशेषतः किशोरों पर सामाजिक परिवेश के दबाव को समझ सकेंगे;
- भिन्न परिस्थितियों वाले दो किशोरों के व्यवहार में अंतर स्पष्ट कर सकेंगे;
- बहादुर के प्रति परिवार के प्रत्येक व्यक्ति के व्यवहार पर कारण सहित टिप्पणी कर सकेंगे;
- बहादुर के नौकरी छोड़कर भाग जाने के बाद सभी के पछतावे का कारण बता सकेंगे;

टिप्पणी

- बहादुर जैसे किसी अन्य किशोर के रहन-सहन पर टिप्पणी कर सकेंगे;
- कहानी के मुख्य पात्रों का चरित्र-चित्रण कर सकेंगे;
- कहानी की भाषा-शैली पर टिप्पणी कर सकेंगे।

1.1 मूल पाठ

आइए, इस कहानी को एक बार ध्यान से पढ़ लेते हैं। आपकी सहायता के लिए कहानी में आए कठिन शब्दों के अर्थ हाशिए पर दिए जा रहे हैं।

बहादुर

सहसा मैं काफ़ी गंभीर हो गया था, जैसा कि उस व्यक्ति को हो जाना चाहिए, जिस पर एक भारी दायित्व आ गया हो। वह सामने खड़ा था और आँखों को बुरी तरह मलका रहा था। बारह-तेरह वर्ष की उम्र। ठिगना चकइठ शरीर, गोरा रंग और चपटा मुँह। वह सफ़ेद नेकर, आधी बाँह की सफ़ेद कमीज़ और भूरे रंग का पुराना जूता पहने था। उसके गले में स्काउटों की तरह एक रूमाल बँधा था। उसको घेरकर परिवार के अन्य लोग खड़े थे। निर्मला चमकती दृष्टि से कभी लड़के को देखती और कभी मुझको और अपने भाई को। निश्चय ही वह पंच बराबर हो गई थी।

उसको लेकर मेरे साले साहब आए थे। नौकर रखना कई कारणों से बहुत ज़रूरी हो गया था। मेरे सभी भाई और रिश्तेदार अच्छे ओहदों पर थे और उन सभी के यहाँ नौकर थे। मैं जब बहन की शादी में घर गया, तो वहाँ नौकरों का सुख देखा। मेरी दोनों भाभियाँ रानी की तरह बैठकर चारपाइयाँ तोड़ती थीं, जबकि निर्मला को सबेरे से लेकर रात तक खटना पड़ता था। मैं ईर्ष्या से जल गया। इसके बाद नौकरी पर वापस आया, तो निर्मला दोनों जून 'नौकर-चाकर' की माला जपने लगी। उसकी तरह अभागिन और दुखिया स्त्री और भी कोई इस दुनिया में होगी? वे लोग दूसरे होते हैं, जिनके भाग्य में नौकर का सुख होता है....

पहले साले साहब से उसका किस्सा सुनना पड़ा। वह एक नेपाली था, जिसका गाँव नेपाल और बिहार की सीमा पर था। उसका बाप युद्ध में मारा गया था और उसकी माँ सारे परिवार का भरण-पोषण करती थी। माँ उसकी बड़ी गुस्सैल थी और उसको बहुत मारती थी। माँ चाहती थी कि लड़का घर के काम-धाम में हाथ बटाए, जबकि वह पहाड़ या जंगलों में निकल जाता और पेड़ों पर चढ़कर चिड़ियों के घोंसलों में हाथ डालकर उनके बच्चे पकड़ता या फल तोड़-तोड़कर खाता। कभी-कभी वह पशुओं को चराने के लिए ले जाता था। उसने एक बार उस भैंस को बहुत मारा, जिसको उसकी माँ बहुत प्यार करती थी, और इसीलिए उससे वह बहुत चिढ़ता था। मार खाकर भैंस भागी-भागी उसकी माँ के पास चली गई, जो कुछ दूरी पर एक खेत में काम कर रही थी। माँ का माथा ठनका। बेचारा बेज़बान जानवर चरना छोड़कर यहाँ क्यों आएगा?

सहसा – अचानक
ठिगना – छोटे कद का
दायित्व – ज़िम्मेदारी
आँखों को मलकाना – आँखें जल्दी-जल्दी खोलना और बंद करना
चकइठ – गोल बनावट का
चमकती दृष्टि से देखना – आशा तथा प्रसन्नता से देखना
ओहदा – पद
खटना – बहुत मेहनत करना
ईर्ष्या से जलना – बहुत ईर्ष्या करना
जून – समय (सुबह-शाम)
माला जपना – रट लगाना; एक ही बात बार-बार कहना
अभागिन – भाग्य जिसका साथ न दे
भरण-पोषण –पालना-पोसना
गुस्सैल – गुस्से वाली; क्रोधी
हाथ बँटाना – सहायता करना
माथा ठनकना – शक होना
बेज़बान – जो बोल नहीं सकता

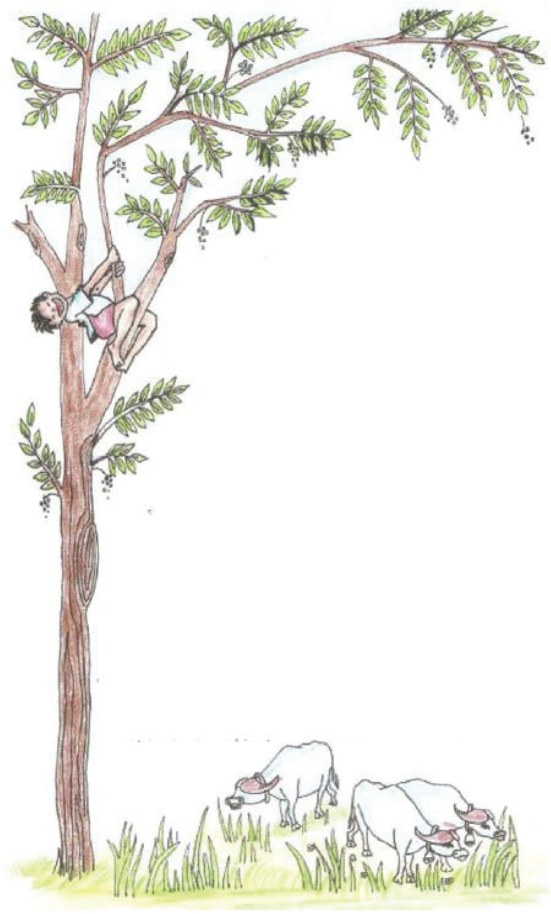

चित्र 1.2

ज़रूर उसने उसको काफ़ी मारा है। वह गुस्से से पागल हो गई। जब लड़का आया, तो माँ ने भैंस की मार का काल्पनिक अनुमान करके एक डंडे से उसकी दुगुनी पिटाई की और उसको वहीं कराहता हुआ छोड़कर घर लौट आई। लड़के का मन माँ से फट गया और वह रात भर जंगल में छिपा रहा। जब सबेरा होने को आया, तो वह घर पहुँचा और किसी तरह अंदर चोरी-चुपके घुस गया। फिर उसने घी की हँडिया में हाथ डालकर माँ के रखे रुपयों में से दो रुपए निकाल लिए। अंत में नौ-दो ग्यारह हो गया। वहाँ से छह मील की दूरी पर बस स्टेशन था, जहाँ गोरखपुर जाने वाली बस मिलती थी।

तुम्हारा नाम क्या है, जी?—मैंने पूछा।

दिल बहादुर, सा'ब।

उसके स्वर में एक मीठी झनझनाहट थी। मुझे ठीक-ठीक याद नहीं कि मैंने उसको क्या हिदायतें दीं। शायद यह कि वह शरारतें छोड़कर ढंग से काम करे और इस घर को अपना घर समझे। इस घर में नौकर-चाकर को बहुत प्यार और इज़्ज़त से रखा जाता है। जो सब खाते-पहनते हैं, वही नौकर-चाकर खाते-पहनते हैं। अगर वह यहाँ रह गया तो ढंग-शऊर सीख जाएगा, घर के और लड़कों की तरह पढ़-लिख जाएगा और उसकी ज़िंदगी सुधर जाएगी। निर्मला ने उसी समय कुछ व्यावहारिक उपदेश दे डाले थे। इस मुहल्ले में बहुत तुच्छ लोग रहते हैं, वह न किसी के यहाँ जाए और न किसी का काम करे। कोई बाज़ार से कुछ लाने को कहे, तो वह 'अभी आता हूँ' कहकर अंदर खिसक जाए। उसको घर के सभी लोगों से सम्मान और तमीज़ से बोलना चाहिए। और भी बहुत सी बातें। अंत में निर्मला ने बहुत ही उदारतापूर्वक लड़के के नाम में से 'दिल' शब्द उड़ा दिया।

परंतु, बहादुर बहुत ही हँसमुख और मेहनती निकला। उसकी वजह से कुछ दिनों तक हमारे घर में वैसा ही उत्साहपूर्ण वातावरण छाया रहा, जैसा कि प्रथम बार तोता-मैना

टिप्पणी

गुस्से से पागल होना – बहुत अधिक गुस्से के कारण कुछ न सूझना
काल्पनिक अनुमान – मन में अंदाज़ा करना
मन फट जाना – लगाव न रहना; प्रीति न रहना
नौ दो ग्यारह होना – भाग जाना
हिदायत – चेतावनी; सीख
शऊर – ढंग; तरीका
व्यावहारिक – व्यवहार करने योग्य
हँसमुख – हमेशा हँसते रहने वाला

टिप्पणी

फ़रमाइश – माँग
फ़िक्र – चिंता
तलना-भूनना – बहुत दुख देना
महीनावारी – मासिक; प्रतिमाह
तकलीफ़ – दर्द
पुलई – टहनी का अंतिम हिस्सा
रिपोर्ट – सूचना
गोया – जैसे

या पिल्ला पालने पर होता है। सबेरे - सबेरे ही मुहल्ले के छोटे-छोटे लड़के घर के अंदर आकर खड़े हो जाते और उसको देखकर हँसते या तरह-तरह के प्रश्न करते। ''ऐ, तुम लोग छिपकली को क्या कहते हो?''... ''ऐ, तुमने शेर देखा है?''... ऐसी ही बातें। उससे पहाड़ी गाने की फ़रमाइशें की जातीं। घर के लोग भी उससे इसी प्रकार की छेड़खानियाँ करते थे। वह जितना उत्तर देता, उससे अधिक हँसता था। सबको उसके खाने और नाश्ते की बड़ी फ़िक्र रहती।

निर्मला आँगन में खड़े होकर पड़ोसियों को सुनाते हुए कहती थी – बहादुर, आकर नाश्ता क्यों नहीं कर लेते? मैं दूसरी औरतों की तरह नहीं हूँ, जो नौकर-चाकर को तलती-भूनती हैं। मैं तो नौकर-चाकर को अपने बच्चे की तरह रखती हूँ। उन्होंने तो साफ़-साफ़ कह दिया है कि सौ-डेढ़ सौ महीनावारी उस पर भले ही ख़र्च हो जाए, पर तकलीफ़ उसको ज़रा भी नहीं होनी चाहिए। एक नेकर-कमीज़ तो उसी रोज़ लाए थे...और भी कपड़े बन रहे हैं...

धीरे-धीरे वह घर के सारे काम करने लगा। सबेरे ही उठकर वह बाहर नीम के पेड़ से दातून तोड़ लाता था। वह हाथ का सहारा लिए बिना कुछ दूर तक तने पर दौड़ते हुए चढ़ जाता। मिनट भर में वह पेड़ की पुलई पर नज़र आता। निर्मला छाती पीटकर कहती थी – अरे रीछ-बंदर की जात, कहीं गिर गया तो बड़ा बुरा होगा। वह घर की सफ़ाई करता, कमरों में पोंछा लगाता, अँगीठी जलाता, चाय बनाता और पिलाता। दोपहर में कपड़े धोता और बर्तन मलता। वह रसोई बनवाने की भी ज़िद करता, पर निर्मला स्वयं सब्ज़ी और रोटी बनाती। निर्मला की उसको बहुत फ़िक्र रहती थी। उसकी उन दिनों तबीयत ठीक नहीं रहती थी, इसलिए वह कुछ दवा ले रही थी। बहादुर उसको कोई काम करते देखकर कहता था – माता जी, मेहनत न करो, तकलीफ़ बढ़ जाएगा। वह कोई भी काम करता होता, समय होने पर हाथ धोकर भालू की तरह दौड़ता हुआ कमरे में जाता और दवाई का डिब्बा निर्मला के सामने लाकर रख देता।

जब मैं शाम को दफ़्तर से आता, तो घर के सभी लोग मेरे पास आकर दिन भर के अपने अनुभव सुनाते थे। बाद में वह भी आता था। वह एक बार मेरी ओर देखकर सिर झुका लेता और धीरे-धीरे मुस्कराने लगता। वह किसी बहुत ही मामूली घटना की रिपोर्ट देता। बाबू जी, बहिन जी का एक सहेली आया था या बाबू जी, भैया सिनेमा गया था। उसके बाद वह इस तरह हँसने लगता था, गोया बहुत ही मज़ेदार बात कह दी हो। मैं उससे बातचीत करना चाहता था, पर ऐसी इच्छा रहते हुए भी मैं जान-बूझकर बहुत गंभीर हो जाता था और दूसरी ओर देखने लगता था।

निर्मला कभी-कभी उससे पूछती थी – बहादुर, तुमको अपनी माँ की याद आती है?

टिप्पणी

– नहीं।

– क्यों?

– वह मारता क्यों था?–इतना कहकर वह ख़ूब हँसता था, जैसे मार खाना ख़ुशी की बात हो।

– तब तुम अपना पैसा माँ के पास कैसे भेजने को कहते हो?

– माँ-बाप का कर्ज़ा तो जन्म भर भरा जाता है – वह और भी हँसता था।

बँसखट – बाँस से बनी चारपाई
निर्जनता – सुनसान; सूनापन
बड़प्पन – बड़ा होने के भाव

निर्मला ने उसको एक फटी-पुरानी दरी दे दी थी। घर से वह एक चादर भी ले आया था। रात को काम-धाम करने के बाद वह भीतर के बरामदे में एक टूटी हुई बँसखट पर अपना बिस्तर बिछाता था। वह बिस्तरे पर बैठ जाता और जेब में से कपड़े की एक गोल-सी नेपाली टोपी निकालकर पहन लेता, जो बाईं ओर काफ़ी झुकी रहती थी। फिर वह एक छोटा-सा आईना निकालकर बंदर की तरह उसमें अपना मुँह देखता था। वह बहुत ही प्रसन्न नज़र आता था। इसके बाद कुछ और भी चीज़ें उसकी जेब से

चित्र 1.3

निकलकर उसके बिस्तरे पर सज जाती थीं – कुछ गोलियाँ, पुराने ताश की एक गड्डी, कुछ ख़ूबसूरत पत्थर के टुकड़े, ब्लेड, कागज़ की नावें। वह कुछ देर तक उनसे खेलता था। उसके बाद वह धीमे-धीमे स्वर में गुनगुनाने लगता था। उन पहाड़ी गानों का अर्थ हम समझ नहीं पाते थे, पर उनकी मीठी उदासी सारे घर में फैल जाती, जैसे कोई पहाड़ की निर्जनता में अपने किसी बिछुड़े हुए साथी को बुला रहा हो।

दिन मज़े में बीतने लगे। बरसात आ गई थी। पानी रुकता था और बरसता था। मैं अपने को बहुत ऊँचा महसूस करने लगा था। अपने परिवार और संबंधियों के बड़प्पन तथा शान-बान पर मुझे सदा गर्व रहा है । अब मैं मुहल्ले के लोगों को पहले से भी तुच्छ समझने लगा। मैं किसी से सीधे मुँह बात न करता। किसी की ओर ठीक से देखता भी नहीं था। दूसरे के बच्चों को मामूली-सी शरारत पर डाँट-डपट देता था। कई बार पड़ोसियों को सुना चुका था – जिसके पास कलेजा है, वही आजकल नौकर रख

टिप्पणी

सकता है। घर के सवांग की तरह रहता है। निर्मला भी सारे मुहल्ले में शुभ सूचना दे आई थी – आधी तनख़ाह तो नौकर पर ही ख़र्च हो रही है, पर रुपया-पैसा कमाया किसलिए जाता है? ये तो कई बार कह ही चुके थे कि तुम्हारे लिए दुनिया के किसी कोने से नौकर ज़रूर लाऊँगा... वही हुआ।

निस्संदेह, बहादुर की वजह से सबको बहुत आराम मिल रहा था। घर ख़ूब साफ़ और चिकना रहता। कपड़े चमाचम सफ़ेद। निर्मला की तबीयत भी काफ़ी सुधर गई थी। अब कोई एक खर भी न टकसाता था। किसी को मामूली काम करना होता, तो वह बहादुर को आवाज़ देता – ''बहादुर, एक गिलास पानी...'', ''बहादुर पेंसिल नीचे गिरी है, उठाना।'' इसी तरह की फ़रमाइशें ! बहादुर घर में फिरकी की तरह नाचता रहता । सभी रात में पहले ही सो जाते थे और सबेरे आठ बजे के पहले न उठते थे।

मेरा बड़ा लड़का किशोर काफ़ी शान-शौकत और 'रौब-दाब' से रहने का कायल था और उसने बहादुर को अपने कड़े अनुशासन में रखने की आवश्यकता महसूस कर ली थी। फलतः उसने अपने सभी काम बहादुर को सौंप दिए। सबेरे उसके जूते में पालिश लगनी चाहिए। कॉलेज जाने के ठीक पहले साइकिल की सफ़ाई ज़रूरी थी। रोज़ ही उसके कपड़ों की धुलाई और इस्त्री होनी चाहिए। और रात में सोते समय वह नित्य बहादुर से अपने शरीर की मालिश कराता और मुक्की भी लगवाता। पर इतनी सारी फ़रमाइशों की पूर्ति में कभी-कभी कोई गड़बड़ी भी हो जाती। जब ऐसा होता, किशोर गर्जन-तर्जन करने लगता, उसको बुरी-बुरी गालियाँ देता और उस पर हाथ छोड़ देता। मार खाकर बहादुर एक कोने में खड़ा हो जाता – चुपचाप।

'देख बे' – किशोर चेतावनी देता – मेरा काम सबसे पहले होना चाहिए। अगर एक काम भी छूटा, तो मारते-मारते हुलिया टाइट कर दूँगा। साला, कामचोर, करता क्या है तू? बैठा-बैठा खाता है।

रोज़ ही कोई-न-कोई ऐसी बात होने लगी, जिसकी रिपोर्ट पत्नी मुझे देती थी। मैंने किशोर को मना किया, पर वह नहीं माना, तो मैंने यह सोचकर छोड़ दिया कि थोड़ा बहुत तो यह चलता ही रहता है। फिर एक हाथ से ताली कहाँ बजती है? बहादुर भी बदमाशी करता होगा। पर, एक दिन जब मैं दफ़्तर से आया, तो मैंने किशोर को एक डंडे से बहादुर की पिटाई करते हुए देखा। निर्मला कुछ दूरी पर खड़ी 'हाँ-हाँ' कहती हुई मना कर रही थी।

मैंने किशोर को डाँटकर अलग किया। कारण यह था कि शाम को साइकिल की सफ़ाई करना बहादुर भूल गया था। किशोर ने उसको मारा तथा गालियाँ दीं तो उसने उसका काम करने से इन्कार कर दिया।

तुम साइकिल साफ़ क्यों नहीं करते ? – मैंने उससे कड़ाई से पूछा।

बाबू जी, भैया ने मेरे मरे बाप को क्यों लाकर खड़ा किया ? – वह रोते हुए बोला।

सवांग – (स्व अंग) अपने परिवार का सदस्य; संबंधी
तनख़ाह – वेतन
निस्संदेह – बिना शक
एक खर भी न टकसाना – कुछ भी न करना
फिरकी की तरह नाचना – काम के लिए यहाँ से वहाँ दौड़ना
शान-शौकत – ठाठ-बाट
कायल – माननेवाला
अनुशासन – नियम; व्यवस्था
नित्य – रोज़; प्रतिदिन
पूर्ति – पूरा करना
गर्जन-तर्जन करना – ऊँची आवाज़ में डाँटना-फटकारना
हाथ छोड़ना – पिटाई करना
हुलिया टाइट करना – चेहरा बिगाड़ना; बुरी तरह से पीटना

टिप्पणी

मैं जानता था कि किशोर उसको और भी भद्दी गालियाँ देता था, लेकिन आज उसने 'सूअर का बच्चा' कहा था, जो उसे बरदाश्त न हुआ। निस्संदेह वह गाली उसके बाप पर पड़ती थी। मुझे कुछ हँसी आ गई। ख़ैर, किशोर के व्यवहार को अच्छा नहीं कहा जा सकता, पर गृहस्वामी होने के कारण मुझ पर कुछ और गंभीर दायित्व भी थे।

मैंने उसे समझाया – बहादुर, ये आदतें ठीक नहीं। तुम ठीक से काम करोगे, तो तुमको कोई कुछ भी नहीं कहेगा। मेहनत बहुत अच्छी चीज़ है, जो उससे बचने की कोशिश करता है, वह कुछ भी नहीं कर सकता। रूठना-फूलना मुझे सख़्त नापसंद है। तुम तो घर के लड़के की तरह हो। घर के लड़के मार नहीं खाते? हम तुमको जिस सुख-आराम से रखते हैं, वह कोई क्या रखेगा? जाकर दूसरे घरों में देखो, तो पता लगे। नौकर-चाकर भरपेट भोजन के लिए तरसते रहते हैं। चलो, सब ख़त्म हुआ, अब काम-धाम करो...

वह चुपचाप सुनता रहा। फिर हाथ-मुँह धोकर काम करने लगा। जल्दी ही वह प्रसन्न भी हो गया। रात में सोते समय वह अपनी टोपी पहनकर देर तक गाता रहा।

लेकिन कुछ दिनों बाद एक और गड़बड़ी शुरू हुई। निर्मला बहुत पतली-पतली रोटियाँ सेंकती थी, इसलिए वह रोटी बनाने का काम कभी बहादुर से नहीं लेती थी, लेकिन मुहल्ले की किसी औरत ने उसे यह सिखा दिया कि परिवार के लिए रोटियाँ बनाने के बाद वह बहादुर से कहे कि वह अपनी रोटी खुद बना लिया करे, नहीं तो नौकर-चाकर की आदत ख़राब हो जाती है, महीन खाने से उनकी आदत बिगड़ जाती है।

यह बात निर्मला को जँच गई थी और रात में उसने ऐसा ही प्रयोग किया। वह अपनी रोटियाँ बनाकर चौके में से उठ गई। बहादुर का मुँह उतर गया। वह चूल्हे के पास सिर झुकाकर चुपचाप खड़ा रहा।

– क्या हो गया रे? – निर्मला ने पूछा।

वह कुछ नहीं बोला।

– चल, चुपचाप बना अपनी रोटियाँ। तू सोचता है कि मैं तुझे पतली-पतली, नरम-नरम रोटियाँ सेंककर खिलाऊँगी? तू कोई घर का लड़का है ? नौकर-चाकर तो अपना बनाकर खाते ही रहते हैं। तीता तो इनको इसलिए लग रहा है कि सारे घर के लिए मैंने रोटियाँ बनाईं, इनको अलग करके इनके साथ भेद क्यों किया? वाह रे, इसके पेट में तो लंबी दाढ़ी है! समझ जा, रोटियाँ नहीं सेंकेगा, तो भूखा रहेगा।

पर, बहादुर उसी तरह खड़ा रहा, तो निर्मला का गुस्से से बुरा हाल हो गया। उसने लपककर उसके माथे पर दो-तीन थप्पड़ जड़ दिए – सूअर कहीं के! इसीलिए किशोर तुझे मारता है। इसी वजह से तेरी माँ भी मारती होगी। चल, बना रोटी...

भद्दी – गंदी
बरदाश्त – सहन
गृहस्वामी – घर का मालिक
महीन खाना – अच्छा खाना; संपन्न लोगों का भोजन
मुँह उतरना – उदास हो जाना
चौका – रसोई
तीता – कड़वा; बुरा
पेट में लंबी दाढ़ी होना – बाहर शरीफ़ दिखना, लेकिन वास्तव में चालाक होना

बहादुर

– मैं नहीं बनाऊँगा... मेरी माँ भी सारे घर की रोटियाँ बनाकर मुझसे रोटी सेंकवाती थी– वह रोने लगा था।

– तो क्या मैं तेरी माँ हूँ कि तू मुझसे ज़िद कर रहा है? घर के लड़कों के बराबर बन रहा है? मारते-मारते मुँह रँग दूँगी।

चित्र 1.4

पर, उसने अपने लिए रोटी नहीं बनाई। मुझे भी बड़ा गुस्सा आया। मैंने उसको डाँटा और समझाया। पर वह नहीं माना। रात भर वह भूखा ही रहा।

पर, सबेरे उठकर वह पहले की तरह ही हँसने लगा। उसने अँगीठी जलाकर अपने लिए रोटियाँ सेंकीं। अपनी बनाई मोटी और भद्दी रोटी को देखकर वह खिलखिलाने लगा। फिर रात की बची हुई सब्ज़ी से उसने खाना खा लिया।

मारते-मारते मुँह रँगना – बहुत मारना; इतना मारना कि चेहरा लाल हो जाए
खिलखिलाना – ज़ोर से हँसना
हाथ खुलना – मारने की आदत पड़ना
हाथ चलाना – मारना
स्वच्छ – साफ़
बातों की जलेबी छनने लगी – इधर-उधर की ढेर सारी बातें होने लगीं

लेकिन निर्मला का भी हाथ खुल गया था। वह उससे कुछ चिढ़ भी गई थी। अब बहादुर से कोई भी गलती होती, तो वह उस पर हाथ चला देती। उसको मारने वाले अब घर में दो व्यक्ति हो गए थे और कभी-कभी एक गलती के लिए उसको दोनों मारते।

बरसात बीत गई थी। आकाश दर्पण की तरह स्वच्छ दिखाई देता। मैंने बहादुर की माँ के पास चिट्ठी लिखी थी कि उसका लड़का मेरे पास मज़े में है और मैं उसकी तनख़ाह के पैसे उसके पास भेज दिया करूँगा, लेकिन कई महीने के बाद भी उधर से कोई जवाब नहीं आया था। मैंने बहादुर से कह दिया था कि उसका पैसा यहाँ जमा रहेगा, जब घर जाएगा, तो लेता जाएगा।

पर, अब बहादुर से भूल-गलतियाँ अधिक होने लगी थीं। शायद इसका कारण मार-पीट और गाली-गलौज़ हो। मैं कभी-कभी इसको रोकना चाहता, फिर यह सोचकर चुप लगा जाता कि नौकर-चाकर तो मार-पीट खाते ही रहते हैं।

एक दिन रविवार को मेरी पत्नी के एक रिश्तेदार आए। वे बीवी-बच्चों के साथ थे। वे अपने किसी ख़ास संबंधी के यहाँ आए थे, तो यहाँ भी भेंट-मुलाकात करने के लिए चले आए थे। घर में बड़ी चहल-पहल मच गई। मैं बाज़ार से रोहू मछली और देहरादूनी चावल ले आया। नाश्ते-पानी के बाद बातों की जलेबी छनने लगी। पर इसी समय एक घटना हो गई।

अचानक उस रिश्तेदार की पत्नी नीचे फ़र्श पर झुककर देखने लगी। फिर उसने चारपाई के अंदर झाँककर देखा। अंत में कमरे के अंदर चली गई और फ़र्श पर पड़े हुए कागज़ों को उठाकर जाँच-पड़ताल करने लगी।

टिप्पणी

– क्या बात है ?–मैंने पूछा।

रिश्तेदार की पत्नी ज़बरदस्ती मुस्कराकर मजबूरी में सिर हिलाते हुए बोली – क्या बताएँ ... ग्यारह रुपए साड़ी के खूँट से निकालकर यहीं चारपाई पर रखे थे... पर वे मिल नहीं रहे हैं...

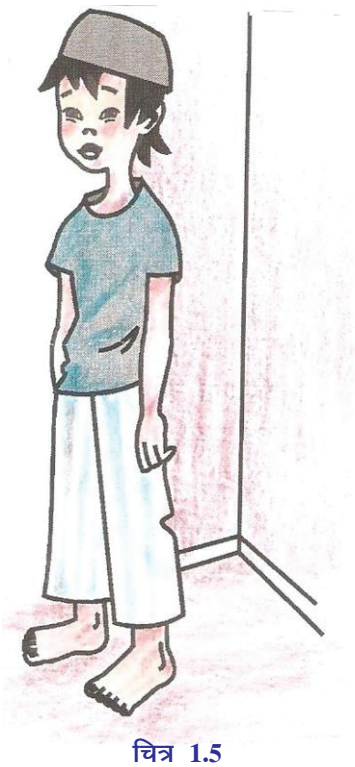

चित्र 1.5

आपको ठीक याद है न...

– हाँ-हाँ ख़ूब अच्छी तरह याद है। ये रुपए मैंने खूँट में बाँधकर रखे थे... रिक्शेवाले को देने के लिए खूँट खोला ही था, फिर वे रुपए चारपाई पर रख दिए थे कि चार रुपए की मिठाई मँगा लूँगी और कुछ बच्चों के हाथ पर रख दूँगी। रास्ते में कोई ढंग की दुकान नहीं मिली थी, नहीं तो उधर से ही लाती। किसी के यहाँ खाली हाथ जाने में अच्छा नहीं लगता। बताइए, अब तो मैं कहीं की न रही। फिर मेरी ओर झुककर धीमे स्वर में कहा था – ज़रा उससे पूछिए न! वह इधर आया था। कुछ देर तक वह यहाँ खड़ा रहा, फिर तेज़ी से बाहर चला गया था।

– अरे नहीं, वह ऐसा नहीं है – मैंने कहा।

– यू डू नॉट नो, दीज़ पीपुल आर एक्सपर्ट इन दिस आर्ट – रिश्तेदार ने कहा। मैंने बहादुर की ओर तिरछी दृष्टि से देखा। वह सिर झुकाकर आटा गूँथ रहा था। उसके चेहरे पर संतुष्टि एवं प्रसन्नता थी। उसने ऐसा काम तो कभी नहीं किया, बल्कि जब कभी उसने दो-चार आने इधर-उधर पड़े देखे, तो उठाकर निर्मला के हाथ में दे दिए थे। पर, किसी के दिल की बात कोई कैसे जान सकता है ? न मालूम अचानक मुझे क्या हो गया और मैं गुस्से में आ गया।

– बहादुर ! मैंने कड़े स्वर में पूछा।

– जी, बाबू जी।

– इधर आओ।

वह आकर खड़ा हो गया।

– तुमने यहाँ से रुपए उठाए थे?

– जी नहीं, बाबू जी – उसने निर्भय उत्तर दिया।

– ठीक बताओ... मैं बुरा नहीं मानूँगा।

साड़ी का खूँट – साड़ी का कोना, जिसमें पैसे रखकर बाँध लिए जाते हैं
यू डू नॉट नो, दीज़ पीपुल आर एक्सपर्ट इन दिस आर्ट – आप नहीं जानते, ये लोग इस कला में बड़े माहिर होते हैं।
तिरछी दृष्टि से – शक की दृष्टि से
संतुष्टि एवं प्रफुल्लता – संतोष और ख़ुशी

बहादुर

– नहीं बाबू जी। मैं लेता, तो बता देता।

– तुम यहाँ खड़े नहीं थे? – रिश्तेदार की पत्नी ने कहा – फिर तेज़ी से बाहर चले गए थे। देखो भैया, सच-सच बता दो। मिठाई ख़रीदने और बच्चों को देने के लिए ये रुपए रखे थे। मैं तो बुरी फँसी। अब वापस जाने के लिए रिक्शे के भी पैसे नहीं।

– मैं तो बाहर नमक लेने लगा था।

– सच-सच बता बहादुर ! अगर नहीं बताएगा, तो बहुत पीटूँगा और पुलिस के सुपुर्द कर दूँगा – मैं चिल्ला पड़ा।

– मैंने नहीं लिया बाबू जी, – बहादुर का मुँह काला पड़ गया।

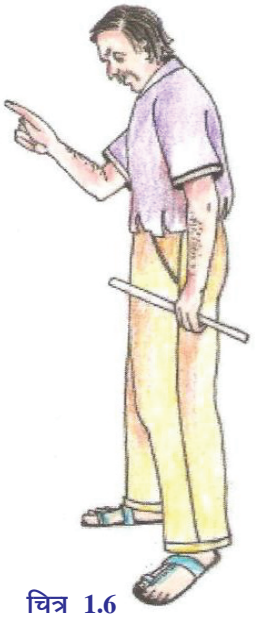

चित्र 1.6

पता नहीं मुझे क्या हो गया! मैंने सहसा उछलकर उसके गाल पर एक तमाचा जड़ दिया। मैं आशा कर रहा था कि ऐसा करने से वह बता देगा। तमाचा खाकर वह गिरते-गिरते बचा। उसकी आँखों से आँसू गिरने लगे।

– मैंने नहीं लिया...

इसी समय रिश्तेदार साहब ने एक अजीब हरकत की – अच्छा छोड़िए, इसको पुलिस के पास ले जाता हूँ। इतना कहकर उन्होंने बहादुर का हाथ पकड़ लिया और उसको दरवाज़े की ओर घसीटकर ले गए। पर, दरवाज़े के पास उससे धीरे से बोले – देखो, तुम मुझे बता दो...मैं कुछ नहीं करूँगा, बल्कि तुमको ईनाम में दो रुपए दे दूँगा।

पर, बहादुर ने इन्कार कर दिया। इसके बाद रिश्तेदार साहब दो-तीन बार उसको दरवाज़े की ओर खींचकर ले गए, जैसे पुलिस को देने ही जा रहे हैं। लेकिन आगे बढ़कर वे रुक जाते और उससे धीमे-धीमे शब्दों में पूछ-ताछ करने लगते।

अंत में हारकर उन्होंने उसको छोड़ दिया और वापस आकर चारपाई पर बैठते हुए हँसकर बोले – जाने दीजिए...ये सब बड़े घाघ होते हैं। किसी झाड़ी-वाड़ी में छिपा आया होगा या ज़मीन में गाड़ आया होगा। मैं तो इन सबों को ख़ूब जानता हूँ। भालू-बंदर से कम थोड़े होते हैं ये। चलिए, इतना नुकसान लिखा था।

इसके बाद निर्मला ने भी उसको डराया-धमकाया और दो-चार तमाचे जड़ दिए, पर वह 'नहीं-नहीं' करता रहा।

इस घटना के बाद बहादुर काफ़ी डाँट-मार खाने लगा। घर के सभी लोग उसको कुत्ते की तरह दुरदुराया करते। किशोर तो जैसे उसकी जान के पीछे पड़ गया था। वह उदास रहने लगा और काम में लापरवाही करने लगा।

सुपुर्द – हवाले
मुँह काला पड़ना – भयभीत होना
घाघ – चालाक; मँजा हुआ
दुरदुराना – डाँटना; भगाना
जान के पीछे पड़ना – बहुत परेशान करना; कष्ट देना